

भूप अलैज्ड सन ऑफ शिओ

बनाम

मातादीन भारद्वाज सन ऑफ लक्ष्मी चंद

4 दिसंबर, 1990

[के. जगन्नाथ शेटी और ए. एम. अहमदी, न्यायाधिपतिगण]

सिविल प्रक्रिया संहिता- धारा 146 और आदेश 20 नियम 14, आदेश 21 नियम 16 - अग्रक्रय डिक्री - क्या इसे निष्पादित करने के लिए पात्र खरीदार को हस्तांतरित किया जा सकता है।

उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, महेंद्रगढ़ ने एक मुकदमे में एक शांति के पक्ष में और अपीलकर्ता के खिलाफ कृषि भूमि के संबंध में अग्रक्रय डिक्री दी और शांति देवी को 17 नवंबर, 1968 तक बिक्री मूल्य जमा करने का निर्देश दिया। प्रत्यर्थी मातादीन ने उक्त डिक्री के संबंध में एक समनुदेशन विलेख प्राप्त किया और इस तरह उसमें शांति देवी के अधिकार प्राप्त कर लिए। उक्त समनुदेशन विलेख के बल पर, उन्होंने 15 अक्टूबर, 1980 को खुद को डिक्री-धारक के रूप में प्रतिस्थापित करके डिक्री को निष्पादित किया। उन्होंने अपीलार्थी से भूमि के वास्तविक कब्जे का दावा किया। अपीलार्थी ने निष्पादन कार्यवाही का विरोध करते हुये तर्क दिया कि अग्रक्रय डिक्री समनुदेशन विलेख के तहत प्रत्यर्थी को कोई अधिकार नहीं दिया गया था। यह भी तर्क दिया गया था कि चूंकि शांति देवी जमा करने में विफल रही थी, इसलिये मुकदमा खारिज कर दिया गया और शांति देवी के पास उस डिक्री में अस्तित्व में बने रहने का कोई अधिकार नहीं था, जिसे वह कर्तव्य विलेख के तहत पारित कर सकती थी। उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, महेंद्रगढ़ ने अभिनिर्धारित किया कि चूंकि राशि 18 नवंबर,

1968 को या उससे पहले जमा नहीं की गई थी, इसलिए मुकदमा खारिज कर दिया गया और इस प्रकार शांति देवी के पास कोई हित नहीं था जिसे वह हस्तांतरित कर सके। उन्होंने तदनुसार निष्पादन आवेदन को खरिज कर दिया। प्रतिवादी मातादीन ने उक्त आदेश से व्यथित होकर उच्च न्यायालय में पुनरीक्षण आवेदन दायर किया। उच्च न्यायालय ने पाया कि शांति देवी ने बिक्री मूल्य जमा करने के लिए समय पर कदम उठाए लेकिन प्रशासनिक कठिनाइयों के कारण, वह केवल 19 नवंबर, 1968 को राशि जमा कर सकी। इसलिये, उच्च न्यायालय ने माना कि डिक्री धारक की ओर से राशि जमा करने में कोई देरी नहीं हुई थी और इसलिए राशि को डिक्री द्वारा अनुमत समय के भीतर जमा किया गया होना माना जाना चाहिए और इसलिए डिक्री धारक इसे सौंपने के लिए सक्षम था और समनुदेशिती इसे निष्पादित करने का हकदार था। पुनरीक्षण आवेदन को स्वीकार किया गया और निष्पादन को आगे बढ़ने का निर्देश दिया गया। अपीलार्थी ने विशेष अनुमति प्राप्त करने के बाद उक्त आदेश के खिलाफ यह अपील दायर की है और उसकी ओर से प्रस्तुत किये गये अन्य तर्कों में मुख्य तर्क डिक्री की हस्तांतरणीयता और निष्पादन कार्यवाही के पोषणीयता से संबंधित है।

अपील को खारिज करते हुए, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया :

अग्रक्रय का अधिकार आम तौर पर संपत्ति में सह हिस्सेदार या ऐसे व्यक्ति को दिया जाता है जो संपत्ति पर कुछ अधिकार का दावा करता है जैसे, रास्ते का अधिकार, आदि या आसपास के आधार पर यानि कि निकटवर्ती संपत्ति का मालिक होने का दावा करता है। यह अधिकार कानून या प्रथा या व्यक्तिगत कानून में स्थापित किया जा सकता है जिसके द्वारा पक्षकार शासित होते हैं। सह-हिस्सेदार या आसन्न अचल संपत्ति के मालिक को यह अधिकार प्रदान करने का एकमात्र उद्देश्य अजनबियों को सह-हिस्सेदार के रूप में अचल संपत्ति में हित प्राप्त करने से बाहर करना या आपत्तिजनक

अजनबियों को पड़ोस से दूर रखना है। यह अधिकार पूरी तरह से व्यक्तिगत है और इसे किसी तीसरे पक्ष को इस स्पष्ट कारण से हस्तांतरित नहीं किया जा सकता है कि यह इसके प्रदत्त उद्देश्य को विफल कर देगा। [416 जी-एच]

वर्तमान मामले में पक्षकारों का स्पष्ट इरादा अग्रक्रय योग्य खाली भूमि में शांतिदेवी के हित को मातादीन को हस्तांतरित करने का था। इसलिये, यह केवल डिक्री के हस्तांतरण का मामला नहीं है, जिसमें संपत्ति का स्वामित्व अग्रकर्ता में निहित रहता है। [418 ए]

दस्तावेज़ स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि मातादीन को स्वयं को डिक्री धारक के स्थान पर लंबित निष्पादन कार्यवाही में एक पक्षकार बनाना पडा और फिर अग्रक्रय योग्य संपत्ति पर कब्जा मांगने का । निर्णय-देनदार को नोटिस देने के बाद डिक्री-धारक के स्थान पर मातादीन को प्रतिस्थापित किया गया था। इसलिए, वह डिक्री को निष्पादित करने का हकदार था। [418 डी]

कानून में मातादीन को हस्तांतरित डिक्री को निष्पादित करने का और निर्णय-देनदार से भूमि का कब्जा प्राप्त करने का अधिकार था। [418 ई]

मेहर खान बनाम बनाम गुलाम रसूल, ए. आई. आर. 1922 लाहौर 300; नेगेश्वर बनाम तालुक सिंह, ए. आई. आर. 1930 अवध 195; वाजिद अली बनाम सालियन, [1909] आई. एल. आर. 31 ए आई आई 623 ; जिला सिंह बनाम हजारी, [1979] 3 एस. सी. आर. 222; चंद्रूप सिंह बनाम दाताराम, ए. आई. आर. 1983 पी एंड एच 1; सरजू प्रसाद बनाम जमना प्रसाद, (रिपोर्ट नहीं किया गया), एस.ए. आदेश संख्या 45 / 1983 दिनांक: 21 नवंबर, 1983 को निर्णित और जुगल किशोर सरज बनाम रॉ कॉटन कंपनी लिमिटेड, [1955] एस. सी. आर. 1369, संदर्भित किया गया।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार : सिविल अपील सं. 1172/1986

(सिविल पुनरीक्षण याचिका संख्या 1217/1983 में पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 22.11.1985 से।)

डॉ. शंकर घोष, (एन. पी.), सुश्री एस. जनानी, सुश्री मीनाक्षी और श्रीमती उर्मिला कपूर (एन. पी.), अपीलार्थी के लिये।

हरबंस लाल, बी. गोयल (एनपी), अशोक के. महाजन और प्रशांत भूषण, प्रतिवादी के लिये।

न्यायालय का निर्णय अहमदी, न्यायाधिपति द्वारा दिया गया था।

वाद संख्या 108/1967 में विद्वान उप-न्यायाधीश, प्रथम वर्ग, महेंद्रगढ़ ने एक शांति देवी के पक्ष में और यहां अपीलार्थी के खिलाफ कृषि भूमि के एक हिस्से के संबंध में एक अग्रक्रय डिक्री स्वीकार की। डिक्री के तहत उन्हें 18 नवंबर, 1968 तक बिक्री मूल्य का पाँचवाँ हिस्सा जमा करना था। प्रतिवादी मातादीन ने दावा किया कि उन्होंने 13/10/1980 के कर्तव्य विलेख के तहत डिक्री में शांति देवी के अधिकार हासिल कर लिये थे। उक्त समनुदेशक विलेख की शक्ति के आधार पर उन्होंने 15 अक्टूबर, 1980 को खुद को डिक्री धारक के रूप में प्रतिस्थापित करके डिक्री को निष्पादित कर दिया। अपीलकर्ता ने इस आधार पर निष्पादन कार्यवाही का विरोध किया कि अग्रक्रय डिक्री हस्तांतरणीय नहीं थी और इसलिए समनुदेशन विलेख के तहत प्रतिवादी को कोई अधिकार नहीं दिया गया। आगे यह तर्क दिया गया कि डिक्री के तहत शांति देवी को 18 नवंबर, 1968 तक प्रतिफल राशि का पांचवाँ हिस्सा जमा कराना था और चूंकि वह जमा करने में विफल रही थी, इसलिए मुकदमा खारिज कर दिया गया और शांति देवी को डिक्री में अस्तित्व बनाये रखने का कोई अधिकार नहीं था जिसे वह समनुदेशन विलेख के तहत पारित कर सकती थी। तर्कों पर निष्पादन न्यायालय ने दो मुद्दे तैयार

किए, पहला समनुदेशन की वैधता पर असर और दूसरा न्यायालय में राशि जमा न करने के परिणाम पर। विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, महेंद्रगढ़ ने माना कि चूंकि राशि 18 नवंबर, 1968 को या उससे पहले जमा नहीं की गई थी, इसलिए मुकदमा स्वतः ही खारिज हो गया और इसलिए, शांति देवी के पास कोई हित नहीं था जिसे वह समनुदेशन विवादित विलेख के तहत हस्तांतरित कर सके। नतीजतन, उन्होंने 18 जनवरी, 1983 के अपने आदेश द्वारा निष्पादन आवेदन को खारिज कर दिया।

उक्त आदेश से व्यथित महसूस करते हुये वर्तमान प्रतिवादी ने पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय में एक पुनरीक्षण आवेदन संख्या 1217/1983 प्रस्तुत किया। पुनरीक्षण आवेदन पर सुनवाई करने वाले विद्वान एकल न्यायाधीश ने निष्कर्ष निकाला कि, डिक्री धारक ने 18 नवंबर, 1968 से पहले राशि जमा करने के लिए समय पर कदम उठाए थे। उन्होंने देखा कि पीठासीन अधिकारी, अर्थात् अधीनस्थ न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, महेंद्रगढ़ ने 30 अक्टूबर, 1968 को स्थानांतरण पर कार्यभार छोड़ दिया था और चूंकि उनके स्थान पर किसी ने कार्यभार नहीं संभाला था, इसलिए उन्होंने 13 नवंबर, 1968 को ट्रजरी चालान के साथ राशि जमा कराने के लिये एक आवेदन पत्र प्रस्तुत किया था लेकिन उसके आवेदन पर विचार नहीं किया गया। इस पर उन्होंने, 16 नवंबर, 1968 को वरिष्ठ अधीनस्थ न्यायाधीश, नारनौल के समक्ष उक्त आवेदन रखा, लेकिन दुर्भाग्य से अधिकार क्षेत्र के अभाव में इसे खारिज कर दिया गया। इसके बाद डिक्री-धारक ने 18 नवंबर, 1968 को गुड़गांव के विद्वान जिला न्यायाधीश का रुख किया। विद्वान जिला न्यायाधीश ने एक आदेश पारित कर वरिष्ठ अधीनस्थ न्यायाधीश, महेंद्रगढ़ को राशि स्वीकार करने के लिए अधिकृत किया। तदनुसार राशि 19 नवंबर, 1968 को जमा की गई थी। उच्च न्यायालय में विद्वान एकल न्यायाधीश ने सही निर्णय दिया कि किसी पक्ष को बिना स्वयं की किसी गलती के कष्ट नहीं सहना चाहिये। इसलिए, उन्होंने माना कि डिक्री धारक की ओर से राशि जमा करने में

कोई देरी नहीं की गई थी और इसलिए राशि को समय के भीतर जमा किया गया माना जाना चाहिए और इसलिये डिक्री धारक राशि समनुदेश करने में सक्षम था और समनुदेशिती इसे निष्पादित करने का हकदारथा। इसलिये, उन्होंने पहले पुनरीक्षण आवेदन को स्वीकार लिया और निष्पादन को आगे बढ़ाने का निर्देश दिया। उक्त आदेश के विरुद्ध ही विशेष अनुमति द्वारा वर्तमान अपील दायर की गई है।

हालाँकि, उच्च न्यायालय ने डिक्री हस्तांतरणीयता से संबंधित महत्वपूर्ण प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। निष्पादन कार्यवाही पर दायर आपत्तियों में निर्णय-देनदार ने यह तर्क उठाया था कि निष्पादन कार्यवाही चलने योग्य नहीं थी क्योंकि डिक्री धारक डिक्री को स्थानांतरित करने में सक्षम नहीं था। अपीलकर्ता के वकील डॉ. घोष ने तर्क दिया कि चूंकि अग्रक्रय डिक्री केवल व्यक्तिगत अधिकार प्रदान करती है, इसलिये डिक्री धारक को कब्जा प्राप्त करनेसे पहले डिक्री के तहत अपने हित को स्थानांतरित करने का कोई अधिकार नहीं है। दूसरे शब्दों में, डॉ. घोष के अनुसार एक अग्रक्रयकर्ता डिक्री के प्रभावी होने से पहले अपने अग्रक्रय के अधिकार को हस्तांतरित नहीं कर सकता है और किसी भी मामले में अग्रक्रय डिक्री का एक समनुदेशिती डिक्री को निष्पादित नहीं कर सकता है और उसके तहत कब्जानहीं मांग सकता है। डॉ. घोष का तर्क है कि यह अधिकार अग्रक्रयकर्ता के लिये आरक्षित है, हालांकि डिक्री प्रभावी होने के बाद वह संपत्ति हस्तांतरित कर सकती है।

राम सहाय बनाम गया, [1884] आई. एल. आर. 7 इलाहाबाद 107 में प्रतिवादीगणों ने, जिन्होंने 30 जून, 1883 की अग्रक्रय डिक्री प्राप्त की थी, 29 नवंबर, 1883 को एक बिक्री विलेख निष्पादित किया, जिसमें संपत्ति को अंबिका प्रसाद को सौंप दिया गया था। उसी दिन प्रतिवादीगणों ने खुद अंबिका प्रसाद को बिक्री का खुलासा करने के बाद डिक्री को निष्पादित किया, और प्रार्थना की कि अंबिका प्रसाद को खरीद

का पैसा जमा करने की अनुमति दी जाए। प्रतिवादीगणों ने प्रार्थना की कि उन्हें अंबिका को संपत्ति सौंपने में सक्षम बनाने के लिये उन्हें अपने कब्जे में ले लिया जाए। निष्पादन न्यायालय ने दोनों प्रार्थनाओं को स्वीकार कर ली। अपील पर, निर्णय-देनदार ने तर्क दिया कि वास्तविक कब्जा प्राप्त करने से पहले बिक्री विलेख का निष्पादन डिक्री को लागू करने में सक्षम बनाने वाले प्रतिवादीगणों के अधिकार को अमान्य कर देता है। निर्णय-देनदार ने रज्जो बनाम लालमन, आईएलआर 5 इलाहाबाद 180 के मामले पर भरोसा व्यक्त किया, जिसमें यह निर्धारित किया गया था कि जब एक अग्रक्रयकर्ता, सफलता की आशा करते हुये, अग्रक्रय में दावा की गई संपत्ति को स्थानांतरित करता है जो अग्रक्रय दावाके उद्देश्य से संसुगत नहीं है, ऐसा हस्तांतरण अग्रक्रय के अधिकार की जब्ती के रूप में कार्यकरता है, और परिणामस्वरूप मुकदमा विफल हो जाना चाहिये। इस मामले को इस आधार पर अलग किया गया था कि स्थानांतरण अग्रिम था यानी, डिक्री पारित होने से पहले ही प्रभावी हो गया था और इसलिए, अग्रक्रयकर्ता ने संपत्ति के संबंध में अग्रक्रय के अपने अधिकार का उल्लंघन किया था। उस मामले में महमूद, न्यायाधिपति ने बताया कि बिक्री विलेख के तहत जो हस्तांतरित किया गया था वह संपत्ति थी न कि डिक्री, बेशक डिक्री के तहत निर्धारित समय के भीतर खरीद धन के भुगतान के अधीन थी। यह आगे बताया गया कि डिक्री धारक डिक्री को निष्पादित करने का हकदार था और निष्पादन न्यायालय इसे रद्द करने के लिये इसके पीछे नहीं जा सकता था। हालांकि, यदि अंबिका प्रसाद को डिक्री के तहत कब्जा मांगना था तो "हमें निष्पादन के लिये उसके आवेदन को अस्वीकार कर देना चाहिये था", विद्वान न्यायाधीश ने कहा। इसके बाद विद्वान न्यायाधीश ने पृष्ठ 111 पर निम्नलिखित शब्दों में कानून का उल्लेख किया:

"अग्रक्रय के अधिकार का एकमात्र उद्देश्य ऐसे अजनबियों का बहिष्कार है जो विक्रेता के अग्रक्रय सह-भागीदारों के लिये आपत्तिजनक है। और यदि अग्रक्रय के लिये एक

डिक्री हस्तांतरण करने में सक्षम थी, ताकि उस डिक्री के निष्पादन में हस्तांतरी को अग्रक्रय संपत्ति पर कब्जा प्राप्त करने में सक्षम करे, यह स्पष्ट है कि अग्रक्रय के अधिकार का उद्देश्य विफल हो जायेगा, क्योंकि डिक्री का हस्तांतरी उतना ही अजनबी हो सकता है जितना कि विक्रयकर्ता जिसके विरुद्ध डिक्री प्राप्त की गई थी या कि बाद वाला उस अग्रक्रयकर्ता की तुलना में निम्न ग्रेड का अग्रक्रय कर्ता हो सकता है जिसने मूल रूप से डिक्री प्राप्त की थी।"

एक बार पारित डिक्री, जैसा कि हमने पहले ही कहा है, डिक्री निष्पादित होने पर किसी भी पक्ष द्वारा उस पर सवाल नहीं उठाया जा सकता है, और यदि अग्रक्रय के लिये डिक्री को वैध रूप से स्थानांतरित किया जा सकता है, तो इसका प्रभाव अंतरिती को कब्जा देने के लिये होगा, इस प्रश्न के परीक्षण के बिना कि क्या ऐसे अंतरिती के पास अग्रक्रय का अधिकार खरीददार की तुलना में, जिसके विरुद्ध डिक्री प्राप्त की गई थी, को अग्रक्रय का अधिकार था।

तर्क की इस पंक्ति पर, विद्वान न्यायाधीश ने रज्जा के मामले को अलग किया और माना कि चूंकि जो हस्तांतरित किया गया वह संपत्ति थी, न कि डिक्री और जो कब्जा था वह डिक्रीधारक द्वारा माना गया था और न कि क्रेता द्वारा, निष्पादन की कार्यवाहियां सक्षम थी। इस दृष्टिकोण को मेहर खान बनाम गुलाम रसूल, ए. आई. आर. 1922 लाहौर 300 और नागेश्वर बनाम तालुक सिंह, ए. आई. आर. 1930 अवध 195 में सही कानून निर्धारित करते हुये स्वीकार किया गया था।

इस न्यायालय ने हजारी बनाम नेकी, [1968] 2 एससीआर 833 में इस न्यायालय को इस बात पर विचार करना आवश्यक था कि क्या मूल वादी के कानूनी प्रतिनिधि जिसने अग्रक्रय के अधिकार को लागू करने के लिये काग्रवाही शुरू की थी, को रिकॉर्ड पर लाया जा सकता है। तर्क यह था कि चूंकि अग्रक्रय का अधिकार एक

व्यक्तिगत अधिकारथा, इसे स्वेच्छा से या अनैच्छिक रूप से हस्तांतरित नहीं किया जा सकता था, और अग्रक्रयकर्ता की मृत्यु पर कार्यवाही समाप्त होनी चाहिये। इस तर्क से निपटते हुये, सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22 नियम 1 ओर 10 के संदर्भ में इस न्यायालय ने वाजिद अली बनाम सलियन, (1909) आईएलआर 31 इलाहाबाद 623 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा लिये गये दृष्टिकोण को मंजूरी दे दी, जिसमें यह माना गया कि जहां गांव वाजिब उल अर्ज में दर्ज प्रथा के अनुसार अग्रक्रय का अधिकार मौजूद है, एक बार अर्जित अधिकार अग्रक्रयकर्ता की मृत्यु पर समाप्त नहीं होता है, बल्कि मृतक के उत्तराधिकारियों को हस्तांतरित हो जाता है। जिलासिंह बनाम हजारी, (1979) 3 एससीआर 222 में रिपोर्ट किये गये उन्हीं पक्षों के बीच मुकदमे बाजी के अगले दौर में इस न्यायालय ने हजारी बनाम जिलासिंह, एआईआर 1970 पी एंड एच 215 में बहुमत के दृष्टिकोण को उलबते हुये आगे स्पष्ट किया कि बीच का अंतर एक स्वैच्छिक अंतर स्थानांतरण और एक अनैच्छिक स्थानांतरण जैसे कि विरासत के माध्यम से महत्वहीन है जहां न्यायालय एक वैधानिक अधिकार से चिंतित है जो दूसरी अपील लंबित रहने तक अग्रक्रकर्ता की मृत्यु से पहले एक डिक्री में परिणत हो गया था। पंजाब और हरियाणा की पूर्ण पीठ ने चांदरूप सिंह बनाम दाताराम, एआईआर 1983 पी एंड एच 1 के बाद के मामले में आदेश के मद संख्या 18 में इस स्थिति को और स्पष्ट किया है। इसलिये, यह स्पष्ट है कि जहां अग्रक्रय का अधिकार एक डिक्री में बदल जाने के बाद स्थानांतरण होता है, वहां मृतक अग्रक्रयकर्ता के कानूनी प्रतिनिधि अभिलेख पर शामिल किये जाने के अधिकारी है।

हम स्पष्ट कर सकते हैं कि हम अग्रक्रय के वैधानिक अधिकार के साथ काम कर रहे हैं, न कि मुस्लिम कानून के तहत। शांति देवी द्वारा कृषि भूमि के एक हिस्से के संबंध में अग्रक्रय के अधिकार का प्रयोग किया गया था। अग्रक्रय डिक्री विचारण न्यायालय द्वारा 14 अक्टूबर, 1968 को पारित की गई थी, जिसके तहत शांति देवी

को 18 नवंबर, 1968 तक बिक्री मूल्य का चार-पांचवा हिस्सा जमा करना था। प्रतिवादी मातादीन ने उक्त डिक्री के संबंध में एक समनुदेशक विलेख रुपये 10 हजार के लिये प्राप्त की थी। इस दस्तावेज़ की एक प्रति रिकॉर्ड में प्रस्तुत की जाती है। शांति देवी को अग्रक्रय डिक्री प्राप्त होने का तथ्य बताने के बाद और 18 नवंबर, 1968 को या उससे पहले बिक्री मूल्य का चार-पाँचवाँ हिस्सा जमा करने के उसके दायित्व को ध्यान में रखते हुए, दस्तावेज़ में निम्नानुसार कहा गया है:

"इसलिए, मैं हस्तांतरण के समझौते के दौरान पहले से ही प्राप्त रुपये 10 हजार के बदले उपरोक्त श्री मातादीन भारद्वाज के पक्ष में समनुदेशिनी के माध्यम से डिक्री को हस्तांतरित करते हुये आज लिखित रूप में देता हूँ। समनुदेशिनी के माध्यम से कृषि भूमि के कब्जे की डिक्री निष्पादित की गई थी, जबकि मैं स्वस्थ और मानसिक रूप से स्वस्थ हूँ, इसे एक लाभदायक सौदा देख रहा हूँ, क्योंकि यह डिक्री निष्पादक द्वारा उक्त भूप के विरुद्ध रुपये 5 हजार के अग्रक्रयाधिकार के आधार पर प्राप्त की गई थी, कि निष्पादक डिक्री धारक या निष्पादक डिक्री धारक का आधार (अब) नहीं है, न ही उन्हें उक्त डिक्री या इसकी विषय वस्तु यानि कृषि भूमि या इसके कब्जे के साथ किसी भी प्रकार से संबंधित होगी।"

आगे यह भी कहा गया है कि मातादीन अपने स्थान पर अपना नाम प्रतिस्थापित करने के बाद निष्पादन की कार्यवाही करके निर्णय-देनदार से भूमि पर कब्जा पाने का हकदार होगा। दस्तावेज़ में दिये गये विवरण से यह स्पष्ट है कि शांति देवी ने कब्जा पाने का अपना अधिकार सौंपा था और प्रतिवादी को निष्पादन कार्यवाही की लंबितता के बारे में सूचित किया गया था। डॉ. घोष का तर्क है कि दस्तावेज़ के तहत, उन्होंने

मातादीन को जमीन नहीं बेची थी, बल्कि निर्णय-देनदार से कृषि भूमि पर कब्जा सुरक्षित करने के अधिकार के साथ उसे केवल डिक्री सौंपी थी। सरजू प्रसाद बनाम जमना प्रसाद एसए, आदेश संख्या 45/1983 से, मैं इलाहाबाद उच्च न्यायालय के अप्रकाशित निर्णय दिनांक 12/11/1883 पर भरोसा करते हुए उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि अग्रक्रय डिक्री पूरी तरह से व्यक्तिगत होने के कारण इसे स्थानांतरित नहीं किया जा सकता है ताकि खरीददार को इसे निष्पादित करने का अधिकारी बनाया जा सके। फिर सवाल यह है कि क्या मातादीन उक्त कार्यवाही को जारी रख सकता है और विचाराधीन भूमि पर कब्जा प्राप्त कर सकता है?

यह सामान्य ज्ञान है कि अग्रक्रय का अधिकार आम तौर पर संपत्ति में सह हिस्सेदार या ऐसे व्यक्ति को दिया जाता है जो संपत्ति पर कुछ अधिकार का दावा करता है जैसे, रास्ते का अधिकार, आदि या आसपास के आधार पर यानि कि निकटवर्ती संपत्ति का मालिक होने का दावा करता है। यह अधिकार कानून या प्रथा या व्यक्तिगत कानून में स्थापित किया जा सकता है जिसके द्वारा पक्षकार शासित होते हैं। सह-हिस्सेदार या आसन्न अचल संपत्ति के मालिक को यह अधिकार प्रदान करने का एकमात्र उद्देश्य अजनबियों को सह-हिस्सेदार के रूप में अचल संपत्ति में हित प्राप्त करने से बाहर करना या आपत्तिजनक अजनबियों को पड़ोस से दूर रखना है। यह अधिकार पूरी तरह से व्यक्तिगत है और इसे किसी तीसरे पक्ष को इस स्पष्ट कारण से हस्तांतरित नहीं किया जा सकता है कि यह इसके प्रदत्त उद्देश्य को विफल कर देगा। यही कारण है कि सरजू प्रसाद (उपरोक्त) मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि अग्रक्रय की डिक्री विशुद्ध रूप से व्यक्तिगत होने के कारण इसे स्थानांतरित नहीं किया जा सकता है ताकि खरीदार को इसे निष्पादित करने का अधिकार मिल सके। इसलिए डॉ. घोष ने कहा कि मातादीन को डिक्री को निष्पादित करने और अपीलार्थी को अग्रक्रय योग्य संपत्ति का कब्जा प्राप्त करने का अधिकारी नहीं

था। यह प्रस्तुतिकरण, हमारे विचार में, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 146, आदेश 20 नियम 14 और आदेश 21 नियम 16 की योजना की अनदेखी करता है।

धारा 146, जिसे 1908 संहिता में पहली बार पेश किया गया था, बताती है कि जहां कोई कार्यवाही की जाती है या किसी व्यक्ति द्वारा या उसके खिलाफ आवेदन किया जाता है, तो कार्यवाही की जा सकती है या आवेदन किसी भी व्यक्ति द्वारा या उसके विरुद्ध किया जा सकता है, उसके अधीन दावा करते हुये, जब तक अन्यथा संहिता या किसी अन्य मौजूदा कानून द्वारा प्रदान न किया गया हो। इसके बाद आदेश 20 नियम 14 आता है जो विशेष रूप से अग्रक्रय डिक्री से संबंधित है। यह प्रदान करता है कि जहां न्यायालय संपत्ति की किसी विशेष बिक्री के संबंध में अग्रक्रय के दावे का फैसला करता है, न्यायालय एक दिन निर्दिष्ट करेगा, जिस पर या उससे पहले खरीद राशि का भुगतान किया जायेगा (यदि पहले भुगतान नहीं किया गया है) और निर्देश देगा कि निर्दिष्ट दिन या उससे पहले अदालत में ऐसी खरीद के पैसेकाभुगतान करने पर, प्रतिवादी वादी को संपत्ति काकब्जा सौंप देगा, जिसका शीर्षक ऐसे भुगतान की तारीख से अर्जित माना जायेगा। शब्द "जिसका स्वामित्व भुगतान की तारीख से अर्जित माना जाएगा" यह स्पष्ट करता है कि निर्दिष्ट तिथि पर या उससे पहले खरीद धन का भुगतान करने पर, संपत्ति का स्वामित्व अग्रक्रयकर्ता में बिना किसी अतिरिक्त दस्तावेज के निहित होगा। इसलिए, इसमें कोई संदेह नहीं है कि जैसे ही शांति देवी ने 19 नवंबर, 1968 को अदालत में खरीद राशि यानी शेष चार-पाँचवीं राशि अदालत में जमा कर दी, कानून की कल्पना से उन्हें अग्रक्रय योग्य भूमि का मालिकाना हक मिल गया और वह उक्त भूमि की मालिक बन गई और निर्णय-देनदार आदेश 20 सी. पी. सी. के नियम 14 के उप-नियम (1) के खंड (बी) में "प्रतिवादी वादी को संपत्ति का कब्जा देगा" शब्दों के बल पर उसे कब्जा देने के लिए बाध्य था। जब शांति देवी ने दस्तावेज को निष्पादित किया, जिसे समनुदेशक विलेख के रूप में वर्णित किया गया था, तो उन्होंने

स्पष्ट रूप से उक्त अग्रक्रय योग्य भूमि में अपना हित मातादीन को हस्तांतरित कर दिया। यह दस्तावेज़ की भाषा से स्पष्ट है जिसमें निकाले गए हिस्से के बाद यह कहा गया है : 'मातादीन भारद्वाज के पास डिक्री धारक समनुदेशिती की क्षमता के समान अधिकार होंगे जो निष्पादक डिक्री धारक को प्राप्त होते हैं। इन शब्दों से कोई संदेह नहीं रह जाता है कि दस्तावेज़ के पक्षकारों को पता था कि संपत्ति में कुछ अधिकार शांति देवी को प्राप्त हुए हैं और वह उन अधिकारों को मातादीन को हस्तांतरित कर रही थी। इसलिए, हमारे विचार में, दस्तावेज़ के नामकरण के अलावा, पक्षकारों का स्पष्ट रूप से इरादा शांति देवी के हित को मातादीन को हस्तांतरित करने का था। इसलिए, यह केवल एक डिक्री के हस्तांतरण का मामला नहीं है जिसमें संपत्ति का स्वामित्व अग्रक्रयकर्ता में निहित रहता है। यह मामला राम सहाय के मामले (उपरोक्त) में महमूद, न्यायाधिपति के आदेश द्वारा पूरी तरह से कवर किया गया है।

आदेश 21 नियम 16 अगला प्रावधान करता है कि जहां एक डिक्री या डिक्री में डिक्री धारक के हित को लिखित रूप में याकानून के संचालन द्वारा समनुदेशिती द्वारा स्थानांतरित किया जाता है, अंतरिती डिक्री के निष्पादन के लिए उस न्यायालय में आवेदन कर सकता है जिसने इसे पारित किया है, और डिक्री को ऐसे निष्पादित किया जा सकता है जैसे कि आवेदन डिक्री धारक द्वारा किया गया था। उक्त नियम में नए जोड़े गए स्पष्टीकरण से यह स्पष्ट होता है कि यह नियम संहिता की धारा 146 के प्रावधानों को प्रभावित नहीं करेगा और न ही यह संपत्ति में अधिकारों के हस्तांतरणकर्ता को प्रभावित करेगा, जो कि वाद का विषय है, डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन करने से डिक्री का एक अलग समनुदेशन किए बिना। वर्तमान मामले में दस्तावेज़ स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि मातादीन को डिक्री धारक के स्थान पर खुद को लंबित निष्पादन कार्यवाही में एक पक्ष के रूप में शामिल करना था और फिर अग्रक्रय संपत्ति का कब्जा

मांगना था। निर्णय-देनदार को नोटिस के बाद डिक्री-धारक के स्थान पर मातादीन को प्रतिस्थापित किया गया था। इसलिए, वह डिक्री को निष्पादित करने का हकदार था।

संहिता के उपरोक्त प्रावधानों को संयुक्त रूप से पढ़ने पर, हमें यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि मातादीन कानूनी में उसे हस्तांतरित डिक्री को निष्पादित करने और निर्णय-देनदार से भूमि का कब्जा प्राप्त करने का हकदार था। जुगल किशोर सराय बनाम राम कॉटन कंपनी लिमिटेड, [1955] एस. सी. आर. 1369 (ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 376) में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एक व्यक्ति जो इसके हस्तांतरण के कारण एक डिक्री के तहत लाभ का दावा करता है, वह धारा 146 के तहत आवेदन कर सकता है और इसमें विफल रहने पर आदेश 21 नियम 16 सी. पी. सी. के तहत आवेदन कर सकता है। जिला सिंह (उपरोक्त) इस न्यायालय ने हजारी के मामले (उपरोक्त) में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के बहुमत के दृष्टिकोण से असहमति व्यक्त करते हुये कहा कि निर्दिष्ट तिथि तक खरीद धन के भ्रूगतानकी आवश्यकता के अनुपालन पर आदेश 20 नियम 14 के आधार पर उस भूमि में अग्रक्रयकर्ता के अधिकार का एक हस्तांतरणकर्ता जो उसमें निहित है, धारा 146, या आदेश 21 नियम 16, सीपीसी के तहत निष्पादन के लिये एक आवेदन बनाये रख सकता है। दूसरे शब्दों में यह कहा गया था कि यदि डिक्री का हस्तांतरणकर्ता बाद के प्रावधान का लाभ नहीं उठा सकता है तो वह निश्चित रूप से पहले वाले प्रावधान का सहारा ले सकता है।

ऊपर बताए गए कारणों से हम इस अपील में कोई गुणावगुण नहीं देखते हैं और इसे लागतों के साथ खारिज करते हैं।

अपील खारिज की गई।

वाई. लाल

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' के जरिए अनुवादक की सहायता से किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।